ʿॐ

ʿसिरि-भगवंत-पुप्फदंत-भूदबलि-पणीदो

ʿछक्खंडागमो

ʿसिरि-वीरसेणाइरिय-विरइय-धवला-टीका-समण्णिदो

ʿतस्स तदियखंडो

ʿबंधसामित्तविचओ

ʿसाहूवज्झाइरिए अरहंते वंदिऊण सिध्दे वि ।

ʿजे पंच लोगवाले वोच्छं बंधस्स सामित्तं ।। १ ।।

ʿजो सो बंधसामित्तविचओ णाम तस्स इमो दुविहो णिद्देसो ओघेण आदेसेण य ।। १ ।।

ʿकिमट्ठमिदं सुत्तं वुच्चदे ? संबंधाभिहेय-पओजणदुप्पायणट्टं । जो सो बंधसामित्त-

----

< साधु, उपाध्याय, आचार्य, अरहंत और सिध्द, ये जो पाँच लोकपाल अर्थात् लोकोत्तम परमेष्ठी हैं उनको नमस्कार करके बंधके स्वामित्वको कहते है ।। १ ।। >

ʿजो वह बंधस्वामित्वविचय है उसका यह निर्देश ओघ आदेशकी अपेक्षा दो प्रकारका है ।। १ ।।

ʿशंका- < किस प्रयोजनसे यह सूत्र कहा जाता है ? >

ʿसमाधान- < सम्बन्ध, अभिधेय और प्रयोजनके बतलानेके लिये उक्त सूत्र कहा गया है । >

< जो वह बंधस्वामित्वविचय है इससे सम्बन्ध कहा गया है । यथा- कृति, वेदना >

छक्खंडागमे बंधसामित्तविचओ

ʿविचओ णामेत्ति एदेण सबंधो कहिदो । तं जहा-कदि-वेदणादिचदुवीसअणिओगद्दारेसु तत्थ बंधणमिदि छट्ठमणिओगद्दारं । तं चउव्विहं-बंधो बंधगा बंधणिज्जं बंधविहाण-मिदि । तत्थ बंधो णाम जीवस्स कम्माणं च संबंधं णयमस्सिदूण परुवेदि । बंधगो त्ति अहियारो एक्कारसअणिओगद्दारेहि बंधगे परुवेदि । बंधणिज्जं णाम अहियारो तेवीस वग्गणाहि बंधजोग्गमबंधजोग्गं च पोग्गलदव्वं परुवेदि । जं तं बंधविहाणं तं चउव्विहं पयडि-ट्ठिदि अणुभाग-पदेसबंधो चेदि । तत्थ पयडिबंधो दुविहो मूलपयडिबंधो उत्तर-पयडिबंधो चेदि । जो सो

मूलपयडिबंधो सो दुविहो एगेगमूलपयडिबंधो अव्वोगाढमूल-पयडिबंधो चेदि । जो सो अव्वोगाढमूलपयडिबंधो सो दुविहो भुजगारबंधो पयडिट्ठाण-बंधो चेदि । तत्थ उत्तरपयडिबंधस्स समुक्कित्तणादि:चदुवीस (१ मु. सपुक्कित्तवाओ चदुवीस इति पाठ: ।) अणिओगद्दाराणि भवंति । तेसु चदुवीसअणिओगद्दारेसु बंधसामित्तं णाम अणिओगद्दारं । तस्सेव बंध-सामित्तविचओ त्ति सण्णा । जो सो बंधसामित्तविचओ बंधण-बंधविहाणप्पसिध्दो (२ अ. प्रतौ कोष्ठकान्तर्यत: सो पाठोनास्ति ।) पदा-हसरुवेण अणाइणिहणो । जो सो त्ति वयणेण जेण सो संभालिदो तेण एसो णिद्देसो संबंधपरुवओ । एसो चेव अभिहेयपरुवओ वि । तं जहा- जीव-कम्माणं मिच्छत्ता-संजमकसाय-जोगेहि एयत्तपरिणामो बंधो । उत्तं च-

----

< आदि चौवीस अनुयोगद्वारोंमें बन्धन नामक जो छठा अनुयोगद्वार है वह चार प्रकारका है- बंध, बंधक, बन्धनीय और बन्धविधान । उनमें बन्ध नामक अधिकार जीव और कर्मोंके सम्बन्धका नयकी अपेक्षासे निरुपण करता है । बन्धक अधिकार ग्यारह अनुयोगद्वारोंसे बन्धकोंका निरुपण करता है । बन्धनीय नामक अधिकार तेईस वर्गणाओंकेद्वारा बन्धयोग्य और अबन्धयोग्य पुद्‍गल द्रव्यका प्ररुपण करता है । जो यह बन्धविधान है वह चार प्रकारका है- प्रकृतिबंध, स्थितिबन्ध, अनुभागबन्ध और प्रदेशबन्ध । उनमें प्रकृतिबन्ध दो प्रकारका है- मूलप्रकृतिबन्ध और उत्तरप्रकृतिबन्ध । जो मूलप्रकृतिबन्ध है वह दो प्रकारका है-एक-एक मूलप्रकृतिबन्ध और अव्वोगाढमूलप्रकृतिबन्ध । जो अव्वोगाढमूलप्रकृतिबन्ध है वह दो प्रकारका है- भुजगारबंध और प्रकृतिस्थानबन्ध । उनमें उत्तरप्रकृतिबन्धके समुत्कीर्तन आदि चौवीस अनुयोगद्वार हैं । उन चौवीस अनुयोगद्वारोंमें बन्धस्वामित्व नामक अनुयोगद्वार है । उसका ही नाम बन्धस्वामित्वविचय हैं ? जो बन्धस्वामित्व नामका अनुयोगद्वार है वह बन्धन और बन्धविधान नामसे प्रसिध्द प्रवाहरुपसे अनादि निधन है । जो सो इस वचनसे चूंकि उसका स्मरण कराया गया है, इसीलिये यह निर्देश सम्बन्धका निरुपक है, और यही अभिधेयका भी निरुपक है । वह इस प्रकार है- जीव और कर्मोंका मिथ्यात्व, असंयम, कषाय और योगोंसे जो एकत्व परिणाम होता है उसे बन्ध कहते हैं । कहा भी है >

णिद्देसपरुवणं

ʿबंधेण य संजोगो पोग्गलदव्वेण होइ जीवस्स ⅃

ʿबंधो पुण विण्णेओ बंधविओओ पमोक्खो दु ।। १ ।⅃

ʿएदस्स बंधस्स सामित्तं बंधसामित्तं, तस्स विचओ विचारणा मीमांसा परिक्खा इदि एयट्ठो । तस्स बंधसामित्तविचयस्स इमो दुविहो णिद्देसो त्ति जेणेदं सुत्तं देसा-मासियं तेणेत्थ पओजणं पि परुवेदव्वं । किमट्ठमेत्थ बंधस्स सामित्तं उच्चदे ? संत-दव्व-खेत्त-फोसण-कालंतर-भावप्पाबहुवागइरागइबंधगत्तेण अवगयाणं चोदसगुणट्ठा-णाणं अणवगदे बंधविसेसे बंधगत्तं बंधकारणगइरागईओ च सम्मं ण णव्वंति ति काऊण चोद्दसगुणट्ठाणाणि आहिकिच्च अप्पाउआणमणुगहट्ठं बंधविसेसो उच्चदे । तस्स णिद्देसो दुविहो ओघादेसभेएण । तिविहो किण्ण होदि? ण, वयणपओगो हि णाम परट्ठो । ण च परो वि दुणयवदिरित्तो अत्थि जेण तिविहा एयविहा वा परुवणा होज्ज त्ति । ओघणिद्देसो दव्वट्ठियणयाणुग्गहकरो, इयरो वि पज्जवट्ठियणस्स ⅃

< जीवका पुद्गल द्रव्यसे जो बन्ध रुपसे सयोग होता है उसे बन्ध जानना चाहिये और बन्धके वियोगको मोक्ष जानना चाहिये ।। १ ।। >

< इस बन्धका जो स्वामित्व है वह बन्धस्वामित्व है । उसका विचय विचारणा, मीमांसा और परीक्षा ये एकार्थक शब्द हैं । उस बन्धस्वामित्वविचयका यह दो प्रकारका निर्देश है चूंकि यह सूत्र देशामर्शक है इस लिये यहां उसका प्रयोजन भी कहना चाहिये । >

ʿशंका⌐< यहां किस लिये बन्धके स्वामित्वको कहा जाता है ? >

ʿसमाधान⌐< सत्त्व, द्रव्य, क्षेत्र, स्पर्शन, काल, अन्तर, भाव, अल्पबहुत्व और गत्यागति बन्धकस्वरुपसे जाने गये चौदह गुणस्थानोंके बन्धविशेषके अज्ञात होनेपर बन्धकत्व व बन्धनिमि-त्तक गति-आगति भले प्रकार ज्ञात नहीं हो सकती, ऐसा जानकर चौदह गुणस्थानोंको अधिकृत करके अल्पायु शिष्योंके अनुग्रहके लिये बन्धविशेष कहा जाता है । उसका निर्देश ओघ और आदेशके भेदसे दो प्रकारका है । >

ʿशंका⌐< वह निर्देश तीन प्रकारका क्यों नही होता ? >

ʿसमाधान-< नहीं होता, क्योंकि वचनका प्रयोग करके लिये होता है, और पर भी दो नयोंको छोडकर है नहीं जिससे तीन प्रकारकी या एक प्रकारकी प्ररुपणा होसके । >

< ओघनिर्देश द्रव्यार्थिक नयवालोंका और इतर अर्थात् आदेशनिर्देश पर्यायार्थिक नय-वालोंका अनुग्रहकर्ता है । >

< १ मु. प्रतौ (बंध सामित्तविचओ विचओ) इति पाठोतात्ति । >

छक्खंडागमे बंधसामित्तविचओ

ʿओघेण बंधसामित्तविचयस्स चोद्दसजीवसमासाणि णादव्वाणि भवंति ।। २ ।।

ʿजहा उद्देसो तहा णिद्देसो त्ति जाणावणट्ठमोघेणेत्ति उत्तं । बंधसामित्तविच-यस्सेत्ति संबंधे छट्ठी वट्ठव्वा । अथवा, बंधसामित्तविचए इदि विसयलक्खणसत्तमीए छट्ठीणिद्देसो कायव्वो । पुव्वमवगया चेव चोद्दसजीवसमासा, पुण ते एत्थ किमट्ठं परुविज्जंते ? ण एस दोसों, विस्सरणालुअसिस्ससंभालणट्ठत्तादो ।

ʿमिच्छाइट्ठी सासणसम्माइट्ठी सम्मामिच्छाइट्ठी असंजद-सम्माइट्ठी संजदासंजदा पमत्तसंजदा अप्पमत्तसंजदा अपुव्वकरणपइ-ट्ठउवसमा खवा अणियट्ठिबादरसांपराइयपइट्ठउवसमा खवा सुहुमसांप-राइयपइट्टउवसमा खवा उवसंतकसायवीयरागछदुमत्था खीणकसाय-वीयरायछदुमत्था सजोगिकेवली अजोगिकेवली ।। ३ ।।

ʿओघक अपेक्षा बन्धस्वामित्वविचयके चौदह जीवसमास जानने योग्य हैं ।। २ ।।

< जैसा उद्देश वैसा निर्देश होता है इसके ज्ञापनार्थ ओघसे ऐसा कहा है। बन्धस्वामित्वविचयके इसे सम्बन्धमें षष्ठी विभक्ति जाननी चाहिये । अथवा बन्धस्वामि-त्वविचयमें इस प्रकार विषय लक्षण सप्तमी विभक्तिके रुपमें षष्ठी विभक्तिका निर्देश करना चाहिये । >

ʿशंका-<चौदह जीवसमास पूर्वमें जाने ही जा चुके हैं, फिर उनकी यहां प्ररुपणा किस लिये की जाती है?>

ʿसमाधान-< यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, यह कथन विस्मरणशील शिष्योंके स्मरण करानेके लिये है । >

ʿमिथ्यादृष्टि, सासादनसम्यग्दृष्टि, सम्यग्मिथ्यादृष्टि, असंयतसम्यग्दृष्टि, संयता-संयत, प्रमत्तसंयत, अप्रमत्तसंयत, अपूर्वकरणप्रविष्ट उपशमक व क्षपक, अनिवृत्ति-बादरसम्परायिकप्रविष्ट उपशमक व क्षपक, सूक्ष्मसाम्परायिकप्रविष्ट उवशमक व क्षपक, उपशान्तकषाय वीतरागछद्मस्थ, क्षीणकषाय वीतरागछद्मस्थ, सयोगिकेवली और अयोगिकेवली, यें चौदह जीवसमास हैं ।।३ ।।

पयडिबंधवोच्छेदपरुवणपइण्णा

ʿएदस्स सुत्तस्स अत्थो जहा जीवट्ठाणे वित्थरेण परुविदो तहा एत्थ परुवेदव्वो विसेसाभावादो । एवं चौदसण्हं जीवसमासाणं सरुवं संभालिय बंधसामित्तपवरुवणट्ठ-मुत्तरसुत्तं भणदि -

ʿएदेसिं चोद्दसण्हं जीवसमासाणं पयडिबंधवोच्छेदो कादव्वो भवदि ।।४ ।।

ʿजदि जीवसमासाणं पयडिबंधवोच्छेदो चेव उच्चदि तो एदस्स गंथस्स बंधसा-मित्तविचयसण्णा कधं घडदे ? ण एस दोसो, एदम्मि गुणट्ठाणे एदासिं पयडीणं बंध-वोच्छेदो होदि त्ति कहिदे हेट्ठिल्लगुणट्ठाणाणि तासिं पयडीणं बंधसामियाणि त्ति सिध्दीदो । किंच वोच्छेदो दुविहो उप्पादाणुच्छेदो अणुप्पादाणुच्छेदो चेदि । उत्पादः सत्वं, अनुच्छेदो (१ अ. प्रत्यौः अनच्छेदः इति पाठः ।) विनाशः अभावः नीरुपता (२ मु. प्रतौ नीरुपिता इति पाठः ।) इति यावत् । उत्पाद एव अनुच्छेद-उत्पादानुच्छेदः, भाव एव अभाव इति यावत् । एसो दव्वट्ठियणव्वहारो । ण च एसो

< इस सूत्रका अर्थ- जैसे जीवस्थानमें विस्तारसे कहा गया है वैसे ही यहां भी कहना चाहिये, क्योंकि, जीवस्थानसे यहां कोई विशेषता नहीं है । इस प्रकार चौदह जीवसमासोंके स्वरुपका स्मरण कराकर बन्धस्वामित्वके निरुपणार्थ उत्तर सूत्र कहते हैं - >

ʿइन चौदह जीवसमासोंके प्रकृतिबन्धव्युच्छेदका कथन करने योग्य है ।।४ ।।

ʿशंका- < यदि यहां जीवसमासोंका प्रकृतिबन्धव्युच्छेद ही कहा जाता है तो फिर इस ग्रन्थका बन्धस्वामित्व विचय यह नाम कैसे घटित होगा ? >

ʿसमाधान- < यह कोई दोष नही है, क्योंकि, इस गुणस्थानमें इतनी प्रकृतियोंका बन्ध-व्युच्छेद होता है, ऐसा कहनेपर उससे नीचके गुणस्थान उन प्रकृतियोंके बन्धके स्वामी हैं, यह स्वयमेव सिध्द हो जाता है । दूसरी बात यह है कि व्युच्छेद दो प्रकारका है- उत्पादानुच्छेद और

अनुत्पादानुच्छेद । उत्पादका अर्थ सत्त्व और अनुच्छेदका अर्थ विनाश, अभाव अथवा नीरुपता है । उत्पाद ही अनुच्छेद उत्पादानुच्छेद (इस प्रकार यहां कर्मधारय समास है) । उक्त कथनका अभिप्राय भावको ही अभाव बतलाना है । यह द्रव्यार्थिक नयके आश्रित व्यवहार है । और यह एकान्तसे अर्थात् सर्वथा चपल अर्थात् मिथ्या नहीं है, क्योंकि, उत्तरकालमें विवक्षित पर्यायके विनाशसे विशिष्ट द्रव्य पूर्व कालमें भी पाया जाता है ।>

छक्खंडागमे बंधसामित्तविचओ

ʿएयंतेण चप्पलओ, उत्तरकाले अप्पिदपज्जायस्स विणासेण विसिट्ठदव्वस्स पुव्विल्लकाले वि उवलंभादो । दव्वट्ठियणयम्मि संताणं पज्जायाणं कधमभावो ? को भणदि तेसिं तत्थाभावो त्ति. किंतु ते तत्थ अप्पहाणा अविवक्खिया अणप्पिया इदि तेसिं दव्व-त्तमेव ण तत्थ पज्जायत्तं । कधमत्थियवसेण अदव्वाणं पज्जयाणं दव्वत्तं? ण, दव्वदो एयंतेण तेसिं पुधभूदाणमणुवलंभादो, दव्वसहावाणं चेवुवलंभा । जदि एवं तो भावस्स दुचरिमादिसु समएसु चरिमसमए इव अभाववहारो किण्ण कीरदे ? ण एस दोसो, दुचरिमादीणं चरिमसमयस्सेव अभावेण सह पच्चासत्तीए अभावादो । दव्वट्ठियस्स कधमभावव्ववहारो ? ण एस दोसो, यदस्ति न तद् द्वयमतिलंघ्य वर्त्तत इति दो वि णए अविलंबिऊण ट्ठिदणेगमणयस्स भावाभावव्वहारविरोहाभावादो । अनुत्पादः

ʿशंका–< द्रव्यार्थिक नयकी विवक्षामें विद्यमान पर्यायोंका अभाव कैसे हो सकता है ? >

ʿसमाधान–< यह कौन कहता है कि उनका वहां अभाव है, किन्तु वे वहां अप्रधान, अविवक्षित अथवा अनर्पित हैं, इसलिये उनके द्रव्यपना ही है ।>

ʿशंका–< अस्तित्वके वशके द्रव्यसे भिन्न पर्यायोंके द्रव्यत्व कैसे सम्भव है ? >

ʿसमाधान–< यह शंका ठीक नही क्योंकि, पर्यायें द्रव्यसे सर्वथा भिन्न नही पायी जाती किन्तु द्रव्यस्वरुप ही वे उपलब्ध होती हैं ।>

ʿशंका–< यदि ऐसा है तो फिर पदार्थके अन्तिम समयके समान द्विचरमादि समयोंमें अभावका व्यवहार क्यों नहीं किया जाता ? >

ʿसमाधान–< यह कोई दोष नहीं है, क्योंकि, अन्तिम समयके समान द्विचरमादिक समयोंके अभावके साथ प्रत्यासत्ति नहीं है ।>

ʿशंका-< द्रव्यार्थिकनयकी अपेक्षा अभावका व्यवहार कैसे होता है ? >

ʿसमाधान-< यह कोई दोष नही हैं क्योंकि, जो है वह दोनोंका अतिक्रमण कर नही रहता इस लिये दोनों नयोंका आश्रयकर स्थित नैगमनयकी अपेक्षा भावमें व अभावरु व्यवहार करनेमें कोई विरोध नहीं आता । >

< अनुत्पादका अर्थ असत्त्व और अनुच्छेदका अर्थ विनाश है । अनुत्पाद ही अनुच्छेद >

ओघेण पंचणाणावरणीयादीणं बंधसामित्त

ʿअसत्वं अनुच्छेदो विनाशः, अनुत्पाद एव अनुच्छेदः अनुत्पादानुच्छेदः, असतः अभाव इति यावत् सतः असत्त्वविरोधात् । एसो पज्जवट्ठियणयव्ववहारो । एत्थ पुण उप्पा-दाणुच्छेदमस्सिदूण जेण सुत्तकारेण अभावव्वहारो कदो तेण भावो चेव पयडिबंधस्स परुविदो । तेणेदस्स गंथस्स बंधसामित्तविचयसण्णा घडदि त्ति ।ʾ

ʿपंचण्णं णाणावरणीयाणं चदुण्हं दंसणावरणीयाणं जसकित्ति-उच्चागोद-पंचण्हमंतराइयाणं को बंधो को अबंधो ? ।।५।।ʾ

ʿबंधो बंधगो त्ति भणिदं होदि । पयडिसमुक्कित्तणाए णाणावरणादीणं सरुवं परुविदमिदि णेह परुविज्जदे, पउणरुत्तियादो । को बंधो को अबंधओ त्ति णिद्देसादो एदं पुच्छासुत्तमासंकियसुत्तं वा । किं मिच्छाइट्ठी बंधओ किं सासणसम्माइट्टी किं सम्मामिच्छाइट्ठी किं असंजदसम्माइट्ठी एवं गंतूण किं अजोगी किं सिध्दो बंधओ त्ति तेणेवं पुच्छा कायव्वा । एदं देसामासियसुत्तं । किं बंधो पुव्वं वोच्छिज्जदि किमु-दओ पुव्व वोच्छिज्जदि किं दो वि समं व च्छिज्जंति, किं सोदएण एदासिं बंधो किं

< अनुत्पादानुच्छेद है असका अभाव यह उसत्का आशय है । क्योंकि, सत्के साथ असत्व विरोध है । यह पर्यायार्थिक नयके आश्रित व्यवहार है । यहांपर चूंकि सूत्रकारने उत्पादानु-च्छेदका आश्रय करके ही अभावका व्यवहार किया है, इसलिये प्रकृतिबन्धका सद्भाव ही निरुपित किया गया है । इस कारण इस ग्रन्थका बन्धस्वामित्वविचय नाम बन जाता है । >

ʿपांच ज्ञानावरणीय, चार दर्शनावरणीय, यशकीर्ति, उच्चगोत्र और पांच अन्त-राय, इनका कौन बन्धक है और कौन अबन्धक है ? ।। ५ ।।ʾ

< बन्ध शब्दसे यहां बन्धकका अभिप्राय प्रकट किया है । चूंकि प्रकृतिसमुत्कीर्तन नामक चूलिकामें ज्ञानावरणादिकोंका स्वरुप कहा जा चुका है, अत एव अब उनका स्वरुप यहां नही कहा जाता, क्योंकि ऐसा करनेंसे पुनरुक्ति दोष आवेगा । कौन बन्धक है और कौन अबन्धक है इस निर्देशसे यह पूच्छासूत्र हैं अथवा यह आशंकासूत्र हैं, ऐसा समझना चाहिये । इसलिये क्या मिथ्यादृष्टि बन्धक हैं, क्या सासादनसम्यग्दृष्टि बन्धक है, क्या सम्य-ग्मिथ्यादृष्टि बन्धक है, क्या असंयतसम्यग्दृष्टि बन्धक हैं, इस प्रकार जाकर क्या अयोगी बन्धक हैं, क्या सिध्द जीव बन्धक हैं, ऐसी यहां पृच्छा करनी चाहिये । यह देशामर्शक सूत्र हैं । इसलिये यहां क्या बन्धकी पूर्वमें व्युच्छित्ति होती है (१) क्या उदयकी पूर्वमें व्युच्छित्ति होती है (२) या क्या दोनोंकी साथ ही व्युच्छित्ति होती है (३) क्या अपने उदयके साथ इनका बन्ध होता हैं (४) क्या पर प्रकृतियोंके उदयके साथ इनका बन्ध होता है (५) या क्या अपनें व पर दोनोंके उदयके साथ इनका बन्ध होता है (६) क्या सान्तर बन्ध होता है (७) क्या >

< १ मु. प्रतौ अनुच्छेद: (अनुत्पादानुच्छेद:) असत: इति पाठ: । >

परोदएण किंस-परोदएण, किंसातरो बंधो कि णिरंतरो बंधो (१ ब. प्रतौ बंधो इति पाठो नास्ति ।) किंसांतरणिरंतरो, किंसपच्चओ किमपच्चओ, किंगइसंजुत्तो किमगइसंजुत्तो, कदिगदिया सामिणो असामिणो, किंवा बंधध्दाणं, किंचरिमसमए बंधो वोच्छिज्जदि किंपढमसमए किमपढमअचरिम (२ ब. प्रतौ अचिरम इति पाठो नास्ति।) समए बंधो वोच्छिज्जदि, किंसादिगो बंधो किंअणादिओ, किं धुवो किमध्दुवो त्ति, तेणेदाओ तेवीसपुच्छाओ पुव्विलपुच्छाए अंतब्भूदाओ त्ति दठ-व्वाओ । एत्थुवउदजंतीओ आरिसगाहाओ इ

< बंधो बंधविही पुण सामित्तध्दाण पच्चयविही य ।
एदे पंचणिओगा भग्गणठाणेसु मगेज्जा (३ ब. प्रतौ मग्गेज्जो इति पाठ:)।। २ ।।
बंधोदय पुव्वं वा समं व णियएण कस्स व परेण ।
अण्णदरस्सुदएण व सांतरविगयंतरं का च ।। ३ ।।

पच्चय-सामित्तविही संजुत्तध्दाणएण तह चेय ।

सामित्तं णेयव्वं पयडीणं ठाणमासेज्ज ।।४ ।।

बंधोदय पुव्वं वा समं व स-परोदए तदुभएण ।

सांतर णिरंतरं वा चरिमेदर सादिआदीया ।।५ ।।>

< निरन्तर बन्ध होता है (८) या क्या सान्तर-निरन्तर बन्ध होता है (९) क्या सानिमित्तक बन्ध होता है (१०) या क्या अनिमित्तक बन्ध होता है (११) क्या गतिसंयुक्त बन्ध होता है (१२) या क्या गतिसंयोगसे रहित बन्ध होता है (१३) कितनी गतिवाले जीव स्वामी हैं (१४) और कितनी गतिवाले स्वामी नहीं है (१५) बन्धाध्वान कितना है अर्थात् बन्धकी सीमा किस गुणस्थानसे किस गुणस्थान तक है (१६) क्या अन्तिम समयमें बन्धकी व्युच्छित्ति होती है (१७) क्या प्रथम समयमें बन्धकी व्युच्छित्ति होती है (१८) या अप्रथम अचरिम समयमें बन्ध व्युच्छित्ति होती है (१९) क्या बन्ध सादि हैं (२०) या क्या अनादि है (२१) क्या बन्ध ध्रुव हो होता है (२२) या क्या अध्रुव है (२३) इस लिये ये तेईस पृच्छाऐं पुछी गई इस पृच्छामें अन्तर्गत हैं, ऐसा जानना चाहिये । यहां उपयुक्त आर्ष गाथायें- >

< बन्ध, बन्धविधि, बन्धस्वामित्व, अध्वान अर्थात् बन्धसीमा और प्रत्ययविधि, ये पांच नियोग अनुयोग मार्गणास्थानोंमें खोजने योग्य हैं ।।२ ।।>

< बन्ध पूर्वमें हैं, उदय पूर्वमें हैं, या दोनों साथ है, किस कर्मका बन्ध निजके उदयके साथ होता है, किसका परके उदयके साथ, और किसका अन्यतरके उदयके साथ, कौन प्रकृति सान्तरबन्धवाली है, और कौन निरन्तरबन्धवाली है प्रत्ययविधि, स्वामित्वविधि तथा गति-संयुक्त बन्धाध्वानके साथ प्रकृतियोंके स्थानका आश्रयकर स्वामित्व जानना चाहिये ।।३-४ ।।>

< बन्ध पूर्वमें होता है, उदय पूर्वमें होता है, या दोनों साथ होते हैं, वह बन्ध स्वोदयसे परोदयसे या दोनोंके उदयसे होता है, उक्त बन्ध सान्तर है या निरन्तर है, वह अन्तिम समयमें होता है या इतर समयमें होता है, तथा वह सादि है या अनादि है ।।५ ।।>

चोद्दसगुणट्ठाणेसु पयडीणमुदयवोच्छेदपरुवणा

'एत्थ एदासु पुच्छासु विसमपुच्छाणमत्थो वुच्चदे । तं जहा-बंधवोच्छेंदो एत्थेव सुत्तसिध्दो त्ति तं मोत्तूण पयडीणमुदयवोच्छेदं ताव वत्तइस्सामो । मिच्छत्त-एइंदिय-बीइंदिय-तीइदिय-

चउरिंदियजादि-आदाव-थावर-सुहुम-अपज्जत्त साहारण णं दसण्हं पयडीणं मिच्छाइट्ठिस्स चरिमसमयम्मि उदयवोच्छेदो । एसो महाकम्मपयडिपाहुडउ-वएसो । चुण्णिसुत्तकत्ताराण (१ मु. प्रतौ उववसो इति पाठ । अ. ब. प्रत्यो: पमिऊण कत्ताराणं इति पाठ: ।) मुवएसेण पंचण्णं पयडीणमुदयवोच्छेदो, चदुजादि-थाव-राणं सासणसम्मादिट्ठिम्हि उदयवोच्छेदब्भुवगमादो । अणंताणुबंधिकोह-माण-माया-लोहाणं सासणसम्माइट्ठिचरिमसमए उदयवोच्छेदो । सम्मामिच्छत्तस्स सम्मामिच्छा-इट्ठिम्हि उदयवोच्छेदो (२ मिच्छे मिच्छादावं सुहुमतिय सासणे अणेइंदी । थावरवियलं मिस्से मिस्सं च य उदयवोच्छिण्णा ।। गो. क. २६५.)। अपच्चक्खाणावरणकोह माण-माया-लोह-णिरयाउ-देवाउ-णिरयगइ-देवगइ-वेउव्वियसरीर-वेउव्वियसरीरअंगोवंग-चत्तारिआणुपुव्वि-दुभग-अणा-देज्ज-अजसकित्तीणं सत्तारसण्णमेदासिं पयडीणं असंजदसम्मादिट्ठिम्हि उदयवोच्छेदो (३ अयदे विदियकसाया वेगुव्वियछक्कं णिरय-देवाऊं । मणुय-तिरियाणुपुव्वी दुब्भगणादेज्ज वज्जसयं ।। गो.क.२६६.छ.ब.२.) ।पच्चक्खाणा-वरणकोह-माण-माया-लोह-तिरिक्खाउ-तिरिक्खगइ-उज्जोव-णीचागोदा-णमट्ठण्णं पयडीणं संजदासंजदम्मि उदयवोच्छेदो । णिद्दाणिद्दा-पयलापयला-थीणगिध्दि-

----

< यहाँ इन पृच्छाओंमें विषम पृच्छाओंका अर्थ कहते हैं । वह इस प्रकार है -चूंकि बन्ध-व्युच्छेद इसी ग्रन्थमें सूत्रसिध्द है, अत एव उसको छोडकर प्रकृतियोंको उदयव्युच्छेदको कहते हैं । मिथ्यात्व, एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय जाति, आतप, स्थावर सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण, इन दश प्रकृतियोंका उदयव्युच्छेद मिथ्यादृष्टि गुणस्थानके अन्तिम समयमें होता है । यह महाकर्मप्रकृतिप्राभृतका उपदेश है । चूर्णिसूत्रोंके कर्ता यतिवृषभाचार्यके उपदेशसे मिथ्यात्व गुणस्थानके अन्तिम समयमें पांच प्रकृतियोंका उदयव्युच्छेद होता है, क्योंकि, चार जाति और स्थावर इन प्रकृतियोंका उदयव्युच्छेद सासादनसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें माना गया है । अनन्तानु-बन्धी क्रोध, मान, माया और लोभका उदयव्युच्छेद सासादनसम्यग्दृष्टि गुणस्थानके अन्तिम समयमें होता है । सम्यग्मिथ्यात्वका उदयव्युच्छेद सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें होता है । अप्र-त्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया लोभ, नरकायु, देवायु, नरकगति, देवगति, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकशरीरांगोपाग, चार आनुपूर्वी दुर्भग, अनादेय और अयशकीर्ति, इन सत्तरह प्रकृतियोंका उदयव्युच्छेद असयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानमें होता है । प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ,

तिर्थगायु, तिर्थग्गति, उद्योत और नीच गोत्र, इन आठ प्रकृतियोंका उदयव्युच्छेद संयतासंयतगुणस्थानमें होता है । निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला, स्त्यानगृध्दिं, >

छक्खंडागमे बंधसामित्तविचओ

ʿआहारसरीरदुगाणं पंचण्णं पयडीणं पमत्तसंजदम्मि उदयवोच्छेदो (१ देसे तदियकसाया तिरियाउज्जोव-णीच-तिरियगदी। छट्टे आहारदुगं थीणतियं उदयवोच्छिण्णा ।। गो.क. २६७.) । अध्दणारायण-खीलिय-असंपत्तसेवट्टसरीरसंघडण-वेदगसम्मत्ताणं चदुण्हं पयडीणं अप्पमत्त (२ अ. प्रतौ चदुण्हं अप्प इति पाठः।) संजदम्मि उदयवोच्छेंदो । हस्स-रदि-अरदि-सोग-भय-दुगुंछाणं छण्णं पयडीणमपुव्वकरणम्मि उद-यवोच्छेदो । इत्थि-णवुंसय-पुरिसवेद-कोह-माण-मायासंजलणाणं छण्णं पयडीणमणिय-ट्टिम्हि उदयवोच्छेदो । लोभसंजलणस्स एक्कस्स चेव सुहुमसांपराइयचरिमसमयम्मि उदयवोच्छेदो । वज्जणारायण-णारायणसरीरसंघडणाणं दोण्णं पयडीणं उवसंतकसा-यम्मि उदयवोच्छेदो (३ अपमत्ते सम्मत्त अंतिमतियसंहदी यपु-वम्हि । छच्चेव णोकसाया अणियट्टीभागभागेसु ।। वेदतिय कोह-माणं मायासजलणमेव सुहुमो लोहो संते वज्जणाराय-णारायं ।। गो.क. २६८-२६९) । णिद्दा-पयलाणं दोण्ह पि खीणकसायदुचरिमसमयम्हि उदयवो-च्छेदो । पंचणाणावरणीय-चउदंसणावरणीय-पंचंतराइयाणं चोद्दसण्णं पयडीणं खीण-कसायचरिमसमयम्मि उदयवोच्छेदो (४ खीणकसायदुचरिमे णिद्दा पयला प उदयवोच्छिण्णा । णाणंतरायदसयं दंसणचत्तारि चरिमम्हि ।। गो.क. २७०.)। ओरालिय-तेजा-कम्मइयसरीर-छसंठाण-ओरा-लियसरीरंगोवंग-वज्जरिसहवइर-णारायणसरीरसंघडण-वण्ण-गंध-रस-फास-अगुरुअ-लहुअ-उवघाद-परघादुस्सास-दोविहायगदि-पत्तेयसरीर-थिराथिर-सुहासुह-सुस्सर-

----

< आहारशरीर और आहारशरीरांगोपांग, इन पांच प्रकृतियोंका उदयव्युच्छेद प्रमत्तसंयतगुणस्थानमें होता है । अर्धनाराच, कीलित, असंप्राप्तसृपाटिकासंहनन और वेदकसम्यक्त्व सम्यक्त्व इन चार प्रकृतियोंका उदयव्युच्छेद अप्रमत्तसंयत गुणस्थानमें होता है । हास्य, रति, अरति, शोक, भय और जुगुप्सा, इन छह प्रकृतियोंका उदयव्युच्छेद अपूर्वकरण गुणस्थानमें होता है । स्त्री, नपुंसक और पुरुषवेद, संज्वलन क्रोध, मान और माया, इन छह प्रकृतियोंका उदय-व्युच्छेद अनिवृत्तिकरण गुणस्थानमें होता है । केवल एक संज्वलन लोभका

उदयव्युच्छेद सूक्ष्म साम्परायिक गुणस्थानके अन्तिम समयमें होता है । वज्रनाराच और नाराच शरीरसंहनन, इन दो प्रकृतियोंका उदयव्युच्छेद उपशान्तकषाय गुणस्थानमें होता है । निद्रा और प्रचला इन दोनों प्रकृतियोंका उदयव्युच्छेद क्षीणकषाय गुणस्थानके द्विचरम समयमें होता हैं । पांच ज्ञानावरणीय चार दर्शनावरणीय और पांच अन्तराय, इन चौदह प्रकृतियोंका उदयव्युच्छेद क्षीणकषाय गुण-स्थानके अन्तिम समयमें होता है । औदारिक, तैजस और कार्मण शरीर, छह संस्थान, औदा-रिकशरीरांगोपांग, वज्रर्षभनाराचसंहनन, वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श, अगुरुलघुक, उपघात, परघात, उच्छ्वास, दो विहायोगतियां, प्रत्येकशरीर, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, सुस्वर, दुस्वर और निर्माण, इन उनतीस प्रकृतियोंका उदयव्युच्छेद सयोगिकेवली गुणस्थानमें होता है । दो वेदनीय, >

पयडीणं बंधोदयवोच्छेदस्स पुव्वावरत्तं

ʻदुस्सर-णिमिणाणमेगुणतीसपयडीणं सजोगिकेवलिम्हि उदयवोच्छेदो (१ तदियक्कवज्ज-णिमिणं थिर-सुह सर-गदि-उराल-तेजदुगं । संठाणं वण्णागुरुचउक्क पत्तेय जोगिम्हि ।। गो.क.२७१.)। दोवेदणीय-मणु-स्सउ-मणुस्सागइ-पंचिंदियजादि-तस-बादर-पज्जत्त-सुभग-आदेज्ज-जसगित्ति-तित्थयर-उच्चागोदाणं तेरसण्हं पयडीणमजोगिकेवलिम्हि उदयवोच्छेदो (२ तदियेक्कं मणुवगदी पंचिंदिय-सुभग तस-तिगादेज्जं । जस-तित्थं मणुवाऊ उच्चं च अजोगि-चरिमम्हि ।। गो. क. २७२.)। एत्थ उवसंहारगाहा-

----

< दस चदुरिगि सत्तारस अट्ठ य तह पंच चेव चउरो य ।

छ-छक्क एग दुग चोद्दस उगुतीस तेरसुदयविही (३ गो. क. २६३.)।। ६ ।। >

ʻएवमुदयवोच्छेदं परुविय कासिं पयडीणं बंधो उदए फिट्टे वि होदि, कासिं पय-डीणं बंधे फिट्टे वि उदओ होदि, कासिं बंधोदया समं वोच्छिज्जंति त्ति वुच्चदे । तं जहा-देवाउ-देवगइ-वेउव्वियसरीर-वेउव्वियसरीरअंगोवंग-देवगइपाओग्गाणुपुव्वि-आहार-दुग-अजसकित्तीण-मट्ठण्णं पयडीणं पढममुदओ वोच्छिज्जदि पच्छा बंधो (३ गो. क. २६३.) । एत्थ उव-संहारगाहा-

< देवाउ-देवचउक्काहार (४ मु. प्रतौ वेउव्वियअगोवंग इति पाठः।) दुअं च अवसमट्ठण्हं ।

पढममुदओ विणस्सदि पच्छा बंधो मुणयेव्वो ।। ७ ।। >

< मनुष्यायु, मनुष्यगति पंचेन्द्रियजाति, त्रस, बादर, पर्याप्त, सुभग, आदेय, यशकीर्ति, तीर्थकर और उच्चगोत्र, इन तेरह प्रकृतियोंका उदयव्युच्छेद अयोगिकेवली गुणस्थानमें होता हैं । यहां उपसंहारगाथा- >

< दश, चार, एक, सत्तरह, आठ, पांच, चार, छह, छह, एक, दो, दो, चौदह उनतीस और तेरह, (इस प्रकार क्रमशः मिथ्यादृष्टि आदि चौदह गुणस्थानोंमें उदयव्युच्छिन्न प्रकृतियोंकी संख्या हैं) ।। ६ ।। >

< इस प्रकार उदयव्युच्छेदको कहकर अब किन प्रकृतियोंका बन्ध उदयके विच्छिन्न होनेपर भी होता है, किन प्रकृतियोंका उदय बन्धके नष्ट होनेपर भी होता हैं, और किन प्रकृतियोंका बन्ध व उदय दोनों साथ ही व्युच्छिन्न होते हैं, इस बातको कहते हैं । वह इस प्रकार हैं- देवायु, देवगति, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकआंगोपांग, देवगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, आहारकशरीर, आहारकशरीरआंगोपांग और अयशकीर्ति, इन आठ प्रकृतियोंका प्रथम उदयका विच्छेद होता है, पश्चात् बन्धका । यहां उपसंहारगाथा- >

< देवायु, देवचतुष्क अर्थात् देवगति, देवगत्यानुपूर्वी, वैक्रियिकशरीर और वैक्रियिकशरीर-आंगोपांग, तथा आहारकशरीर, आहारकशरीर आंगोपांग् एवं अयशकीर्ति, इन आठ प्रकृतियोंका पहिले उदय नष्ट होता हैं, पश्चात् बन्ध, व्युच्छित्ति होती है, ऐसा जानना चाहिये ।। ७ ।। >

< ५ देवचउक्काहारदुगज्जसदेवाउगाण सो पच्छा । गो.क. ४००. >

छक्खंडागमे बंधसामित्तविचओ

'मिच्छत्त-अणंताणुबंधिचउक्क-अपच्चक्खाणावरणचउक्क-पच्चक्खाणावरणच-उक्क-तिण्णि-संजलण-पुरिसवेद-हस्स-रदि-भय-दुगुंछ-एइंदिय-तीइंदिय-चउरिंदियजादि-मणुसगइ-पाओग्गाणुपुव्वि-आदाव-थावर-सुहुम-अपज्जत्त-साहारणाणं एक्कत्तीसपय-डीणं बंधोदया समं वोच्छिज्जंति (१ मिच्छत्तादावाणं णराणु-थावरचउक्काणं । पण्णरकसाय-मयदुग-हस्सदु-हस्सदु-चउजाइ-पुरिसवेदाणं । सममेक्कत्तीसाणं सेसिगसीदाण पुव्वं तु ।। गो.क. ४००-४०१.)। एत्थ उवसंहारगाहाओ-

----

< मिच्छत्त-भय-दुगुंछा-हस्स-रई-पुरिस-थावरादावा ।

सुहुम जाइचउक्कं साहारणयं अपज्जत्तं ।।८ ।।

पण्णरस कसाया विणु लोहेणेक्केण आणुपुव्वी य ।

मणुसाण एदासिं समगं बंधोदवुच्छेदो ।।९ ।।>

पंचणाणावरणीय-णवदंसणावरणीय-दोवेयणीय-लोहसंजलण-इत्थि-णवुंसयवेद-अरइ-सोगणिरयाउ-तिरिक्खाउ-मणुस्साउ-णिरयगइ-तिरिक्खगइ-मणुस्सगइ-पंचिंदिय-जाइ-ओरालिय तेजाकम्मइयसरीर-छसंठाण-ओरालियसरीरअंगोवंग-छसंघडण-वण्ण-चउक्क-णिरयगइ-तिरिक्खगइपाओग्गाणुपुव्वि-अगुरुअलहुअचउक्क-उज्जोव-दोविहाय-गइ-तस-बादर-पज्जत्त-पत्तेयसरीर-थिराथिर-सुहासुह-सुभग-दुभग-सुस्सर-दुस्सर-आदे-ज्ज-अणादेज्ज-जसगित्ति-णिमिण-तित्थयर-णीचुच्चागोद-पंचंतराइयाणमेगासीदिपय-

----

< मिथ्यात्व, चार अन्तानुबन्धी, चार अप्रत्याख्यानावरण, चार प्रत्याख्यानावरण, तीन संज्वलन, पुरुषवेद, हास्य, रति, भय, जुगुप्सा, एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रियजाति, मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, आतप, स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण, इन इकतीस प्रकृति-योंका बन्ध व उदय दोनों साथ व्युच्छित्त होते हैं । यहां उपसंहारगाथायें- >

< मिथ्यात्व, भय, जुगुप्सा, हास्य, रति, पुरुषवेद, स्थावर, आतप, सूक्ष्म, एकेन्द्रिय आदि चार जाति, साधारण, अपर्याप्त, संज्वलनलोभके विना पन्द्रह कषाय और मनुष्यगत्यानुपूर्वी, इन प्रकृतियोंका बन्धव्युच्छेद और उदयव्युच्छेद साथ ही होता है ।।८-९ ।।>

पांच ज्ञानावरणीय, नौ दर्शनावरणीय, दो वेदनीय संज्वलनलोभ, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, अरति, शोक, नारकायु तिर्यगायु, मनुष्यायु, नरकगति, तिर्यग्गति, मनुष्यगति, पंचेन्द्रिय-जाति, औदारिक, तैजस और कार्मण शरीर, छह संस्थान, औदारिकशरीरांगोपांग, छह संहनन, वर्णादिक चार, नरकगत्यानुपूर्वी, तिर्यग्गतिप्रायोग्यानुपूर्वी, अगुरुलघु आदिक चार, उद्योत, दो विहायोगति, त्रस, बादर पर्याप्त, प्रत्येकशरीर स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, सुभग, दुर्भग, सुस्वर, दुस्वर, आदेय, अनादेय, यशकीर्ति, निर्माण, तीर्थकर नीचगोत्र, उच्चगोत्र

२ मु. प्रतौ णीचुच्चगोंद इति पाठः।

ʿडीणं पढमं बंधो वोच्छिज्जदि, पच्छा उदओ एत्थ उवसंहारगाहाʾ

< पुव्वुत्तवसेसाओ एगासीदी हवंति पयडीओ ।

त्ताणं बंधुच्छेदो पुव्वं पच्छोदउच्छेदो (१ अ. प्रतौ पुच्छोदउच्छेदो इति पाठः ।) ।। १० ।। >

ʿसेसाणं जहावसरमत्थं भणिस्सामो ʾ

ʿमिच्छादिट्ठिप्पहुडि जाव सुहुमसांपराइयसुध्दिसंजदेसु उवसमा खवा बंधा । सुहुमसांपराइयसुध्दिसंजदध्दाए चरिमसमयं गंतूण बंधो बोच्छिज्जदि । एदे बंधा, अवसेसा अबंधा ।। ६ ।ʾ

ʿएदस्स सुत्तस्स अत्थो वुच्चदे । तं जहा - मिच्छाइट्ठिप्पहुडि जाव सुहुमसांपरा-इयखवगा त्ति एदेण वयणेण अद्धाणं जाणाविदं । एदे बंधा, अवसेसा अबंधा त्ति एदेण बंधस्स सामित्तं जाणाविदं । सुहुमसांपराइयसुध्दिसंजदध्दाए चरिमसमयं गंतूण बंधो वोच्छिज्जदि त्ति एदेण वि किं चरिमसमए बंधो वोच्छिज्जदि त्ति पुच्छाए पढम अचरिम (२ मु. प्रतौ पढम (अपढम) अचरिम इति पाठः ।) पडिसेहमुहेण पडिउत्तरो दिण्णो । अवसेसाणं पुच्छाणं ण परिच्छेओ

< और पांच अन्तराय, इन इक्यासी प्रकृतियोंका पहिले बन्ध नष्ट होता है, पश्यात् उदय । यहां उपसंहागाथा->

< पूर्वोक्त प्रकृतियोंसे शेष जो इक्यासी प्रकृतियां रहती हैं उनका बन्धव्युच्छेद पहिले और उदयव्युच्छेद पश्चात् होता है ।। १० ।। >

< शेष प्रश्नोंका अर्थ यथावसर कहेंगे->

ʿमिथ्यादृष्टिसे लेकर सूक्ष्मसाम्परायिकशुध्दिसंयत उपशामक व क्षपक तक पूर्वोक्त ज्ञानावरणादि प्रकृतियोंके बन्धक हैं । सूक्ष्मसाम्परायिककालके अन्तिम समयमें जाकर इन प्रकृतियोंका बन्ध व्युछिन्न होता है । ये बन्धक है, शेष अबन्धक हैं ।। ६ ।ʾ

< इस सूत्रका अर्थ कहते हैं । वह इस प्रकार है- मिथ्यादृष्टिसे लेकर सूक्ष्म- साम्परायिक क्षपक तक इस वचनसे बन्धाध्वान ज्ञापित किया है । ये बन्धक हैं, शेष अबन्धक हैं इससे बन्धका स्वामित्व ज्ञापित किया हैं । सूक्ष्मसाम्परायिकशुध्दिसंयत-कालके अन्तिम समयमें जाकर बन्ध व्युच्छिन्न होता हैं इससे भी क्या चरम समयमें बन्ध व्युच्छिन्न होता? इस पृच्छाका प्रथम और

अचरम समयके प्रतिषेधमुखसे प्रत्युत्तर दिया गया है । शेष पृच्छाओंका निर्णय यहां सूत्रमें नहीं किया गया । इसीलिये यह देशामर्शक >

कदो । तेणेदं देसामासियसुत्तं, तम्हा एत्थ लीणत्थाणं परुवणं कस्सामो । तं जहा - किं बंधो पुव्वं वोच्छिज्जदि, किमुदओ पुव्वं वोच्छिज्जदि, किं दो वि समं वोच्छिज्जंति, एदासिं तिण्णं पुच्छाणं वुत्तरो वुच्चदे । एदासिं सोलसण्णं पयडीणं बंधो पुव्वं वोच्छि-ज्जदि सुहुमसांपराइयचरिमसमए, उदओ पच्छा वोच्छिज्जदि; पंचणाणावरणीय-चउदंसणावरणीय-पंचंतराइयाणं खीणकसायचरिमसमए, जसकित्ति उच्चागोदाणम-जोगिचरिमसमए उदयवोच्छेददंसणादो । किं सोदएण, किं परोदएण, किं सोदयपरो-दएण एदासिं बंधो त्ति पुच्छमस्सिदूण वुच्चदे । एत्थ ताव एदेण संबंधेण सोदएण परो-दएण सोदय-परोदएण बज्झमाणपयडिपरुवणं कस्सामो । तं जहा- णिरयाउदेवाउ-णिर-यगइ-देवगइ-वेउव्वियसरीर-आहारसरीर-वेउव्विय-आहारसरीरंगोवंग-

----

णिरयगइ-देव-गइ-पाओग्गाणुपुव्वि-तित्थयरमिदि एदाओ एक्कारपयडीओ परोदएणेव बज्झंति । एत्थ उवसंहारगाहा-

< तित्थयर-णिरय-देवाउअ-चवेउव्वियछक्क (१ मु. प्रतौ देवाउअं वेउव्विय इति पाठ।) दो वि आहारा ।

एक्कारसपयडीणं बंधो हु परोदए वुत्तो ।। ११ ।। >

पंचणाणावरणीय-चउदंसणावरणीय-मिच्छत्त (२ अ. प्रतौ वंरणीय (चउदंसणावरणीय) मिच्छत्त इति पाठः नास्ति।)-तेजा-कम्मइयसरीर-वण्णचउक्कं अगुरुअलहुअ-थिराथिरं-सुहासुह-णिमिणं-पंचंतराइयमिदि एदाओ सत्तवीसपयडीओ-

< सूत्र है और देशामशक होनेसे यहां लीन अर्थात् अन्तर्निहित अर्थोकी प्ररुपणा करते हैं । वह इस प्रकार है- क्या बन्ध पूर्वमें व्युच्छिन्न होता हैं, क्या उदय पूर्वमें व्युच्छिन्न होता है, या क्या दोनों साथ व्युच्छिन्न होते हैं ? इन तीन पृच्छाओंका उत्तर कहते हैं - इन सोलह प्रकृतियोंका बन्ध उदयव्युच्छित्तिसे पहिले सूक्ष्मसाम्परायिक गुणस्थानके अन्तिम समयमें व्युच्छिन्न होता है, तत्पश्चात् उदयकी व्युच्छित्ति होती है; क्योंकि पांच ज्ञानावरणीय, चार दर्शनावरणीय और पांच

अन्तराय, इन चौदह प्रकृतियोंका क्षीणकषाय गुणस्थानके अन्तिम समयमें तथा यशकीर्ति व उच्चगोत्र इन दो प्रकृतियोंका अयोगिकेवलीके अन्तिम समयमें उदयव्युच्छेद देखा जाता है । क्या स्वोदयसे, क्या परोदयसे, या क्या स्वोदय-परोदयसे इनका बन्ध होता है ? इस पृच्छाका आश्रयकर उत्तर कहते हैं । अब यहां पहिले इस सम्बन्धसे स्वोदय, परोदय और स्वोदय-परोदयसे बंधनेवाली प्रकृतियोंका निरुपण करते हैं । वह इस प्रकार है - नारकायु, देवायु, नरकगति, देवगति, वैक्रियिकशरीर, आहारकशरीर, वैक्रियिकशरीरांगोपांग, आहारकशरीरांगोपांग, नरक-गत्यानुपूर्वी, देवगत्यानुपूर्वी और तीर्थकर, ये ग्यारह प्रकृतियां परोदयसेही बंधती हैं । यहां उपसंहारगाथा->

< तीर्थकर, नारकायु, देवायु, वैक्रियिकशरीरादि छह और दोनों आहारक, इन ग्यारह प्रकृतियोंका बन्ध परोदयसे कहा गया है ।। १२ ।। >

< पांच ज्ञानावरणीय, (चार दर्शनावरणीय), मिथ्यात्व, तैजस और कार्मण शरीर, वर्णादिक चार, अगुरुकलघु, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, निर्माण और पांच अन्तराय, ये >

स-परोदएण बज्झमाणपडिपरुवणा

ʻसोदएण बज्झंति । पंचदंसणावरणीय-दोवेदणीय-सोलसकसाय-णवणोकसाय-तिरि-क्खाउ-मणुस्साउ-तिरिक्खगइ-मणुस्सगइ-एइंदिय-बीइंदिय-तीइंदिय-चउरिंदिय-पंचिंदि-यजादि-ओरालियसरीर छसंठाण-ओरालियसरीरअंगोवंग-छसंघडण-तिरिक्खगइ-मणुस्सगइपाओग्गाणुपुव्वि-उवघाद-परघाद-उस्सास-आदाव-उज्जोव-दोविहायगदि-तस-थावर-बादर-सुहुम-पज्जत्त-अपज्जत्त-पत्तेय-साधारण-सरीर-सुभग-सुस्सर-दुस्सर-आदेज्ज-अणादेज्ज-जसकित्ति-अजसकित्ति-णोचुच्चागोदमिदि एदाओ वासीदिपयडीओ सोदय-परोदएण बज्झंति (१सुर-णिरयाऊ तित्थं वेगुव्वियछक्कहारमिदि जेसिं। परउदयेण य बंधो मिच्छं सुहुमस्स घादीओ।।तेजदुगं वण्णचऊ थिर-सुहमुगलगुरु-णिमिण-धुवउदया । सोदयबंधा सेसा वासीदा उभयबंधाओ ।। गो.क.४०२-४०३.)। एत्थ उवसंहारगाहाओ ङ्क

< फाणतराय-दंसण-थिरादिचउ तेजकम्मदेहाइं ।

णिमिणं अगुरुवलहुअ वण्णचउक्कंच मिच्छत्तं ।। १२ ।। >

< सत्तावीसेदाओ बज्झंति हु सोदएण पयडीओ ।

सोदय-परोदएण वि बज्झतवसेसियाओ दु ।। १३ ।। >

ʿएत्थ णाणावरणंतराइयदसपयडीओ दंसणावरणस्स चत्तारि पयडीओ चेव (२ अ.प्रतौ चे इति पाठः ।) बंध-माणाणि सव्वगुणट्ठाणाणि सोदएण चेव बधंति, मिच्छाइट्ठिप्पहुडि जाव खीणकसाया त्ति एदासिं णिरंतरोदयादो सोदएण बज्झमाणपयडीणमब्भंतरे पादादो वा । जसकित्तिं

< सत्ताईस प्रकृतियां स्वोदयसे बंधती हैं । पांच दर्शनावरणीय, दो वेदनीय सोलह कषाय, नौ नोकषाय, तिर्यगायु, मनुष्यायु, तिर्यग्गति, मनुष्यगति, एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय जाति, औदारिकशरीर, छह संस्थान, औदारिकशरीरांगोपांग, छह संहनन, तिर्यग्गति-प्रायोग्यानुपूर्वी, मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, उपघात परघात, उच्छ्वास, आतप, उद्योत, दो विहा-योगति, त्रस, स्थावर, बादर, सूक्ष्म, पर्याप्त, अपर्याप्त, प्रत्येक, साधारण शरीर, सुभग, दुर्भग, सुस्वर, दुस्वर, आदेय, अनोदय, यशकीर्ति, अयशकीर्ति, नीचगोत्र और उच्चगोत्र ये व्यासी प्रकृतियां स्वोदय-परोदय दोनों प्रकारसे बंधती हैं । यहां उपसंहारगाथाये- >

< पांच ज्ञानावरण, पांच अन्तराय, दर्शनावरण चार, स्थिर आदिक चार, तैजस और कार्मण शरीर, निर्माण, अगुरुकलघुक, वर्णादिक चार और मिथ्यात्व, ये सत्ताईस प्रकृतियां तो स्वोदयसे बंधती हैं और शेष प्रकृतियां स्वोदय-परोदयसे बंधती हैं ।। १२-१३ ।। >

< यहां ज्ञानावरण व अन्तरायकी दश प्रकृतियां तथा दर्शनावरणकी चार प्रकृतियाँ, इनको बांधनेवाले सब गुणस्थान स्वोदयसे ही बांधते हैं, क्योंकि, मिथ्यादृष्टिसे लेकर क्षीण-कषाय गुणस्थान तक इनका निरन्तर उदय रहता हैं, अथवा स्वोदयसे बंधनेवाली प्रकृतियोंके भीतर इनका पाप हैं । यशकीर्ति प्रकृतिको मिथ्यादृष्टिसे लेकर असंयतसम्यग्दृष्टि गुणस्थानतक >

ʿमिच्छाइट्ठिप्पहुडि जाव असंजदसम्माइट्ठि त्ति सोदएण वि परोदएण वि बंधति, एदेसु दोण्णं एक्कदरस्सुदयत्तादो । उवरिमा सोदएण चेव बंधंति, संजदासंजदप्पहुडिउवरिमेसु गुणट्ठाणेसु अजसकित्तिउदयाभावादो । उच्चागोदं मिच्छाइट्ठि प्पहुडि जाव संजदासंजद (१ मु. प्रतौ संजदासंजदा इति पाठः ।) त्ति एदे सोदएण परोदएण वि बज्झंति, एत्थ दोण्णं

गोदाणमुदयसंभावादो । उवरिमा पुण सोदएण चेव बंधंति, तत्थ णीचागोदस्सुदयाभावादो । तम्हा जसकित्ति-उच्चा-गोदाणि सोदय-परोदयबंधा इदि सिध्दं ।

एदासिं बंधो किं सांतरो किं णिरंतरो किं सांतर-निरंतरो त्ति एदासिं पुच्छाणं पडिवयणं वुच्चदे (२ मु. प्रतौ पुच्छणंपडिवण्णं इति पाठः।) एत्थ एदेण अत्थसंबंधेण ताव सांतर-णिरंतर-सांतरणिरंतरेण बज्झ-माणपयडीओ जाणावेमो । तं जहा-पंचणाणावरणीय-णवदंसणावरणीय-मिच्छत-सोलसकसाय-भय-दुगुंछः-आउचउक्क-आहार-तेजा-कम्मइयसरीर-आहारसरीरअंगो-वंग-वण्ण-गंध-रस-फास-अगुरुवलहुअ-उवघाद-णिमिण-तित्थयर-पंचंतराइयमिदि एदा-ओ चउवण्णं पयडीओ णिरंतरं बज्झंति । तत्थ उवसंहारगाहा-

----

< सत्तेताल धुवाओ तित्थयराहार-आउचत्तारि ।

चउवण्णं पयडीओ बज्झंति णिरंतरं सव्वा ।। १४ ।। >

< स्वोदयसे भी बांधते हैं और परोदयसे भी बांधते हैं, क्योंकि, इन गुणस्थानोंमें यशकीर्ति और अयशकीर्तिमेंसे किसी एकका उदय रहता हैं । असंयतसम्यग्दृष्टिसे ऊपरके गुणस्थानवर्ती जीव स्वोदयसे ही बांधते हैं, क्योंकि, संयतासंयतसे लेकर उपरिम गुणस्थानोंमें अयशकीर्तिका उदय नहीं रहता । उच्चगोत्रको मिथ्यादृष्टिसे लेकर संयतासंयत तकके जीव स्वोदयसे और परोदयसे भी बांधते हैं, क्योंकि, यहां दोनों गोत्रोंका उदय सम्भव है । परन्तु इससे ऊपरके जीव स्वोदयसे ही बांधते हैं, क्योंकि, वहां नीचगोत्रका उदय नही रहता । इस कारण यशकीर्ति और उच्चगोत्र प्रकृतियां स्वोदय-परोदयसे बंधनेवाली हैं, यह सिध्द होता है । >

< अब उक्त सोलह प्रकृतियोंका बन्ध क्या सान्तर है, क्या निरन्तर है, और क्या सान्तर-निरन्तर हैं ? इन पृच्छाओंका उत्तर कहते हैं । यहां इस अर्थसम्बन्धसे पहिले सान्तर, निरन्तर और सान्तर-निरन्तर रुपसे बंधनेवाली प्रकृतियोंका बोध कराते हैं । वह इस प्रकार है - पांच ज्ञानावरणीय, नौ दर्शनावरणीय, मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा आयु चार, आहारक-शरीर, तैजसशरीर, कार्मणशरीर, आहारकशरीरांगोपांग, वर्ण, गन्ध, रस, स्पर्श, अगुरुकलघुक, उपघात, निर्माण, तीर्थकर और पांच अन्तराय, ये चौवन, प्रकृतियां निरंतर बंधती हैं । यहां उपसंहारगाथा->

< सैतालीस ध्रुवप्रकृतियां, तीर्थंकर, आहारकशरीर, आहारकशरीरांगोपांग और चार आयु, ये सब चौवन प्रकृतियां निरंतर बंधती हैं ।। १४ ।। >

< ३ सत्तेताल धुवाओ तित्थयराहाराउया णिरंतरगा । गो.क. ४०४ >

सांतर-णिरंतरेण बज्झमाणपंयडिपंरुवणा

ʿकाओ धुवबंधियपयडीओ ? एदाओ चेव आउचउक्क-तित्थयराहारदुयविर-हिदाओ । एदासि परुवणगाहाओ-

< णाणंतरायदसयं दंसण णव मिच्छ सोलस कसाया ।

भयकम्म दुगुंच्छा वि य तेजा कम्मं च वण्णचदू ।। १५ ।।

अगुरुअलहु-उवघादं णिमिणं णाम च होंति सगदालं ।

बंधो चउव्वियप्पो धुवबंधीणं पयडिबंधो (१ घादिति-मिच्छ-कसाया भय-तेजगुरुदुग-णिमिण-वण्णचओ । सत्तेतालधुवाणं चदुधा सेसाणयं तु दुधा गो.क. १२४.)।। १६ ।। >

ʿणिरंतरबंधस्स धुवबंधस्सच को (२ मु. प्रतौ धुवबंधस्स को इति पाठः।) विसेसो ? जिस्से पयडीए पओ (३ मु. प्रतौ पच्चओ इति पाठः।) जत्थ कत्थ वि जीवे अणादि-धुवभावेण लब्भइ सा धुवबंधपयडी । जिस्से पयडीए पओ णियमेण सादि-अघ्दुओ अंतोमुहुत्तादिकालावट्ठाई सा णिरंतरबंधपयडी । जिस्से जिस्से पयडीए अध्दा-क्खएण बंधवोच्छेदो संभवइ सा सांतरबंधपयडी । असादावेदणीय-इत्थि-णवुंसयवेद-अरइ-सोग-णिरयगइ-जाइचउक्क-हेट्ठिमपंचसंठाण-पंचसंघडण-णिरयगइपाओग्गाणु-

----

ʿशंका-< ध्रुवबन्धी प्रकृतियां कौनसी है ? >

ʿसमाधान-< चार आयु, तीर्थंकर और आहारकद्विकसे रहित ये पूर्वोक्त प्रकृतियां ही ध्रुवप्रकृतियां हैं । इन प्रकृतियोंकी निरुपक गाथायें->

< ज्ञानावरण और अंतरायकी दश, नौ दर्शनावरण मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भयकर्म जुगुप्सा, तैजस और कार्मण शरीर, वर्णादिक चार, अगुरुकलघु, उपघात और निर्माण नामकर्म, ये सैतालीस ध्रुवबन्धी प्रकृतियां हैं । इनका प्रकृतिबन्ध सादि, अनादि, ध्रुव एवं अध्रुव रुपसे चार प्रकारका होता है ।। १५-१६ ।। >

ʿशंका- < निरंतरबंध और ध्रुवाबंधमें क्या भेद है ? >

ʿसमाधान- < जिस प्रकृतिका पद अर्थात् स्थान जिस किसी भी जीवमें अनादि एवं ध्रुव भावसे पाया जाता है वह ध्रुवबंधीप्रकृति है, और जिस प्रकृतिका पद नियमसे सादि एवं अध्रुव तथा अन्तर्मुहूर्त आदि काल तक अवस्थित रहनेवाला है वह निरन्तरबन्धप्रकृति है ।>

< जिस जिस प्रकृतिका बन्धकालके समाप्त होनेसे बन्धव्युच्छेद सम्भव है वह सान्तरबन्ध-प्रकृति है । असातावेदनीय, स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, अरति, शोक, नरकगति, जाति चार, अधस्तन पांच संस्थान, पांच सहनन, नरकगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, आताप, उद्योत, अप्रशस्तविहायो->

ʿपुव्वि-आदावुज्जोव-अप्पसत्थविहायगइ-थावर-सुहुम-अपज्जत्त-साहारण-अथिर-असुह-दूभग-दुस्सर-अणाएज्ज-अजसकित्ती एदाओ चोत्तीसपयडीओ सांतरं बज्झंति (१ णिरयदुग-जाइचउक्कं संहदि-संठाणपणपणगं ।। दुग्गमणादावदुगं थावरदसगं असादसंढित्थी । अरदीसोगं चेदे सांतरगा होंति चोत्तीसा ।। गो.क. ४०४-४०५.) । अवसे-साओ बत्तीस पयडीओ सांतर-णिरंतरं बज्झंति । तासिं णामणिद्देसो कीरदे । तं जहा-सादावेदणीय-पुरिसवेद-हस्स-रदि-तिरिक्खगइ-मणुस्सगइ-देवगइ-पंचिंदिय-जादि-ओ-रालिय-वेउव्वियसरीर-समचउरससंठाण-ओरालिय-वेउव्वियसरीरअंगोवंग-वज्जरि-सह-वइरणारायणसरीरसंघडण-तिरिक्खगइ-मणुस्सगइ-देवगइपाओग्गाणुपुव्वि-परघा-दुस्सास-पसत्थ-विहायगइ-तस-बादर-पज्जत्त-पत्तेयसरीर-थिर-सुह सुभग-सुस्सर-दुस्सर-आदेज्ज (२ प्रतिषु सुस्सर-दुस्सर-आदेज्ज-इति पाठः ।)-जसकित्ति-णीचुच्चागोदमिदिसांतर-णिरंतरेण बज्झमाणपयडीओ (३ सुर-णर-तिरियोरालिय-वेगुव्वियदुग-पसत्थगदि-वज्जं । परघाददु-समचउरं पंचिंदिय तसदसं सादं ।। हस्स-रदि-पुरिस-गोददु सप्पडिवणखम्मि सांतरा होंति । णट्ठे पुण पडिवक्खे णिरंतरा होंति बत्तीसा ।। गो. क. ४०६-४०७.) । एत्थ उवसंहारगाहाओ-

----

< इत्थि-णउंसयवेदा जाइचउक्कंअसाद-णिरयदुगं ।

आदाउज्जोवारइ-सोगासुह-पंचसंठाणा ।। १७ ।।

पंचासुहसंघडणा विहायगइ अप्पसत्थिया अण्णे ।

थावर-सुहुमासुहदस चोत्तीसिह सांतरा बंधा ।। १८ ।। >

< गति, स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण, अस्थिर, अशुभ, दुर्भग, दुस्वर, अनादेय और अयश-कीर्ति, ये चौंतीस प्रकृतियां सान्तर रुपसे बंधती हैं । शेष बत्तीस प्रकृतियां सान्तर-निरन्तर रुपसे बंधती है । उनका नामनिर्देश किया जाता हैं । वह इस प्रकार है- सातावेदनीय, पुरुषवेंद, हास्य, रति, तिर्यग्गति, मनुष्यगति, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, वैक्रियिकशरीर, समचतुरस्त्रसंस्थान, औदारिकशरीरांगोपांग, वैक्रियिकशरीरांगोपांग, वज्रर्षभ-वज्रनाराचशरीर-संहनन, तिर्यग्गतिप्रायोग्यानुपूर्वी, मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, देवगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, परघात, उच्छ्वास, प्रशस्तविहायोगति त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येकशरीर, स्थिर, शुभ, सुभग, सुस्वर, दु:स्वर, आदेय, यशकीर्ति, नीचगोत्र और उच्चगोत्र, ये सान्तर-निरन्तर रुपसे बंधनेवाली प्रकृतियां हैं । यहां उपसंहारगाथायें ->

< स्त्रीवेद, नपुंसकवेद, जाति चार, असातावेदनीय, नरकगति, नरकगतिप्रायोग्यानुपूर्वी, आतप, उद्योत, अरति, शोक, अशुभ पांच संस्थान, पांच अशुभ संहनन, अप्रशस्त विहायोगति तथा स्थावर, सूक्ष्म एवं अशुभ आदि अन्य दश, इस प्रकार ये चौंतीस प्रकृतियां यहां सान्तर बन्धवाली हैं ।। १७-१८ ।। >

जोघेण पंचणाणावरणीयादीणं सांतर-णिरंतरबंधित्तं

< सांतरणिरंतरेण य बत्तीसवसेसियाओ पयडीओ ।

बज्झंति पच्चयाणं दुपयाराणं वसगयाओ ।। १९ ।। >

'एत्थ पंचणाणावरणीय-चउदंसणावरणीय-पंचंतराइयपयडीओ णिरंतरं बज्झंति, धुवबंधित्तादो । जसकित्ती सांतर-णिरंतरं बज्झदि । कुदो ? मिच्छाइट्ठिप्पहुडि जाव पमत्तो त्ति सांतरं (१ मु. प्रतौ सांतर-निरंतरं इति पाठः।) बज्झइ, पडिवक्खअजसकित्तीए बंधसंभवादो । उवरि णिरंतंर बज्झइ जसकित्ती पडिवक्खपयडीए बंधाभावादो । तेण जसकित्ती बंधेण सांतर-णिरं-तरा । उच्चागोदं मिच्छाइट्ठि-सासणसम्माइट्ठिणो सांतरं बंधंति, पडिवक्खपयडीए तत्थ बंधसंभवादो । उवरिमा पुण णिरंतरं बंधंति, पडिवक्खपयडीए तत्थ बंधाभावादो । भोगभूमीसु पुण सव्वगुणट्ठाणजीवा उच्चागोद चेव णिरंतरं बंधंति, तत्थ पज्जत्तकाले देवगइं मोत्तूण अण्णगईणं बंधाभावादो । तेण उच्चागोदं पि बंधेण सांतर-णिरंतरं '

‘एदासिं पयडीणं किं सपच्चओ बंधो किमपच्चओ त्ति पुच्छिदे उच्चदे-सपच्चगो बंधो, ण णिक्कारणी । एत्थ ताव पच्चयपरुवणा कीरदे । तं जहा-मिच्छत्तासंजम-

----

< शेष बत्तीस प्रकृतियां मूल व उत्तर भेद रुप दो प्रकार प्रत्ययोंके वशाभूत होकर सान्तर-निरन्तर रुपसे बंधती हैं ।। १९ ।। >

< यहां पांच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण और पांच अन्तराय प्रकृतियां निरन्तर बंधती हैं, क्योंकि, ये प्रकृतियां ध्रुवबन्धी हैं । यशकीर्तिको जीव सान्तर-निरन्तर रुपसे बांधते हैं । इसका कारण यह हैं कि मिथ्यादृष्टिसे लेकर प्रमत्त गुणस्थान तक यह प्रकृति सान्तर बंधती हैं, क्योंकि, यहां इसकी प्रतिपक्षी अयशकीर्तिका बन्ध सम्भव है । प्रमत्त गुणस्थानसे ऊपर यश-कीर्ति प्रकृति निरन्तर बंधती हैं, क्योंकि, वहां प्रतिपक्ष प्रकृतिके बन्धका अभाव हैं । इसीलिये यशकीर्ति बन्धसे सान्तर-निरन्तर हैं । उच्चगोत्रको मिथ्यादृष्टि और सासादनसम्यग्दृष्टि जीव सान्तर बांधते हैं, क्योंकि, उन दो गुणस्थानोंमें प्रतिपक्ष प्रकृतिका बन्ध सम्भव हैं । परन्तु उपरितन गुणस्थानवर्ती जीव उसे निरन्तर बांधते हैं, क्योंकि, वहां प्रतिपक्ष प्रकृतिका बन्ध नहीं रहता । तथा भोगभूमियोंमें सर्व गुणस्थानवर्ती जीव केवल उच्चगोत्रको ही निरन्तर बांधते हैं, क्योंकि, वहां पर्याप्तकालमें देवगतिको छोडकर अन्य गतियोंका बन्ध नहीं होता । इसलिये उच्चगोत्र भी बन्धसे सान्तर-निरन्तर है । >

< इन प्रकृतियोंका क्या सप्रत्यय अर्थात् सकारण बंध होता है या क्या अप्रत्यय अर्थात् अकारण बन्ध होता है ? इस पृच्छाका उत्तर कहते हैं - इन प्रकृतियोंका बन्ध सकारण होता हैं, अकारण नहीं । यहां पहिले प्रत्ययोंकी प्ररुपणा की जाती है । वह इस >

‘कसाय-जोगा इदि एदे चत्तारि मूलपच्चया । संपदि उत्तरपच्चयपरुवणं कस्सामो मिच्छा-इट्ठिआदिगुणट्ठाणेसु ढोएदूण-मिच्छत्तं पंचविहं एयंतण्णाण-विवरीय-वेणइय-संसइय-मिच्छत्तमिदि । तत्थ अत्थि चेव; णत्थि चेव, एगमेव, अणेगमेव; सावयवं चेव, णिर-वयवं चेव; णिच्चमेव, अणिच्चमेव; इच्चाइओ एयंताहिणिवेसो एयंतमिच्छत्तं (१ तत्र इदमेव इत्थमेवेति धर्मिधर्मयोरभिनिर्देश एकान्तः । स.स. ८,१, त.रा.८,१,२८ यत्राभिसन्निवेशः स्यादत्यन्तं

धर्मिधर्मयो: । इदमेवेत्थमेवेत्ति तदैकान्तिकमुच्यते ।। त.सा.५,१.)। विचारिज्जमाणे जीवाजीवादिपयत्थाण संति (२ अ. प्रतौ ण दांति इति पाठ: ।) णिच्चाणिच्चवियप्पेहि, तदो सव्वम-ण्णाणमेव, णाणं णत्थि त्ति अहिणिवेसो अण्णाणमिच्छत्तं (३ हिताहितपरीक्षाविरहो ऽज्ञानिकत्वम् । स.सि.८,१.त.रा. ८,१,२८ हिताहितविवेकस्य यत्रात्य-न्तमदर्शनम् । यथा पशुबधो धर्मस्तदाज्ञानिकमुच्यते ।। त.सा.५,७.)। हिंसालियवयण-चोज्ज-मेहुण-परिग्गह-राग-दोस मोहण्णाणेहि चेव णिव्वुई होई त्ति अहिणिवेसो विवरीय-मिच्छत्तं (४ पुरुष एवेदं सर्वमिति वा, नित्यमेवेति (वा अनित्यमेवेति वा), सग्रन्थो निर्ग्रन्थ:, केवली कवला-हारी, स्त्री सिध्दयतीत्येवमादि: विपर्यय: । स.सि. ८, १. पुरुष एवेदं सर्वमिति वा नित्य एव वा अनित्य एवेति, सग्रन्थो निर्ग्रन्थ:, केवली कवलाहारी, स्त्री सिध्दयतीत्येवमादिर्विपर्यय: । त.रा.१,८,२८. सग्रन्थोऽपि च केवली रुचिरेवंविधा यत्र विपरीतं हि तत्स्मृतम् ।। त. सा. ५, ६.)। अइहिय-पारत्तियसुहाइं सव्वाइं पि विणयादो चेव, ण णाण-दंसण-तवोद-वासकिलेसेहिंतो त्ति अहिणिवेसो वेणइयमिच्छत्तं (५ सवंदेवतानां सर्वसमयानां च समदर्शन वैनयिकम् । स.सि. ८,१., त.रा. ८,१,२८. सर्वेषामपि-देवाना समयाना तथैव च । यत्र स्यात् समदर्शित्वं ज्ञेयं वैनयिकं हि तत् ।। त. सा. ५, ८.)। सव्वत्थ संदेहो चेव णिच्छओ णत्थि

< प्रकार है - मिथ्यात्व, असंयम, कषाय और योग, ये चार मूल प्रत्यय हैं । अब उत्तर प्रत्ययोंका निरुपण मिथ्यादृष्टि आदि गुणस्थानोंमें लाकर करते हैं - एकान्त, अज्ञान, विपरीत, वैनयिक और सांशयिक मिथ्यात्वकेभेदसे मिथ्यात्व पांच प्रकारका हैं । इनमें सत् ही है, असत् ही हैं; अनेक ही है; सावयव ही हैं, निरवयव ही है; नित्य ही है, अनित्य ही है; इत्यादिक एकान्त अभिनिवेशको एकान्तमिथ्यात्व कहते हैं । नित्यानित्य विकल्पोंसे विचार करनेपर जीवाजीवादि पदार्थ नहीं हैं, अत एव सब अज्ञान ही है, ज्ञान नहीं है, ऐसे अभिनिवेशको अज्ञानमिथ्यात्व कहते हैं । हिंसा, अलीक वचन, चौर्य, मैथुन, परिग्रह, राग, द्वष, मोह और अज्ञान, इनसे ही मुक्ति होती है, ऐसा अभिनिवेश विपरीत-मिथ्यात्व कहलाता है । ऐहिक एवं पारलौकिक सुख सभी विनयसे ही प्राप्त होते है, न कि ज्ञान, दर्शन, तप और उपवास जनित क्लेशोंसे; ऐसे अभिनिवेशका नाम वैनयिक मिथ्यात्व हैं । सर्वत्र संदेह ही है, निश्चय नहीं है, ऐसे अभिनिवेशको >

ʿत्ति अहिणिवेसो संसयमिच्छ्त्तं (१ सम्यग्दर्शन- ज्ञान चारिताणि किं मोक्षमार्गः स्याद्वा नवेत्यन्यतरणपक्षापरिग्रहःसंशयः । स.सि.८,१. सम्यग्दर्शन- ज्ञान-चारित्राणि मोक्षमार्ग किं स्याद्वा न वेति मतिद्वैतं संशयः । त.रा. ८,१,२८, किं वा भवेन्न वा जैनो धर्मोऽहिंसादिलक्षण । इति बत्र मतिद्वधं भवेत् स.जायकं हि तत् । त.खा.५,५.) । एवमेदे मिच्छ्त्तपच्चया पंच (५) ꭗ

ʿअसंजमपच्चओ दुविहो इंदियासंजम-पाणासंजम (२ अ. प्रतौ पाजुसंजम इति पाठः।) भेएण । तत्थ इंदियासंजमो छव्विहो परिस-रस-रुव-गंध-सद्द-णोइंदियासंजमभेएण । पाणासंजमो वि छव्विहो पुढवि-आउ-तेउ-वाउ-वणप्फदि-तसासंजमभेएण । असंजमसव्वसमासो बारस (१२) । कसा-यपच्चओ पंचवीसविहो सोलकसाय-णवणोकसायभेएण । कसायपच्चयसमासो एसो (२५) । जोगपच्चओ तिविहो मण-वचि-कायजोगभेएण । सच्च-मोस-सच्चमोस-असच्चमोसभेदण चउव्विहो मणजोगो । वचिजोगो वि चउव्विहो सच्च-मोस-सच्चमोस-असच्चमोसभेदण चउव्विहो मणजोगो । वचिजोगो वि चउव्विहो सच्च-मोस-सच्चमोस-असच्चमोसभेएण । कायजोगो सत्तविहो ओरालिय-ओरालियमिस्स-वेउव्विय-वेउव्वि-यमिस्स-आहार-आहारमिस्स-कम्मइयकायजोगभेएण । एदेसिं सव्वसमासो पण्णारस (१५) । सव्वपच्चयसमासा सत्तावण्ण (५७) । एत्थ आहारदुगमवणिदे मिच्छाइट्ठि-

----

< संशयमिथ्यात्व कहते हैं । इस प्रकार ये मिथ्यात्व प्रत्यय पांच (५) हैं । >

< असंयम प्रत्यय इन्द्रियासंयम और प्राण्यसंयमके भेदसे दो प्रकारका है । उनमें इन्द्रिया-संयम स्पर्श, रस, रुप गन्ध, शब्द और नोइन्द्रिय जनित असंयमके भेदसे छह प्रकारका है । प्राण्यसंयम भी पृथिवी, अप्, तेज, वायु, वनस्पति और त्रस जीवोंकी विराधनासे उत्पन्न असंय-मके भेदसे छह प्रकारका है । सब असंयम के सब भेद बारह (१२) होते है। >

< कषायप्रत्यय सोलह कषाय और नौ नोकषायके भेदसे पच्चीस प्रकारका है । यह कषाय प्रत्ययोंका जोग पच्चीस (२५) हुआ । >

< योगप्रत्यय मन, वचन और काय योगके भेदसे तीन प्रकारका है । मनोयोग चार प्रकारका है- सत्यमनोयोग, मृषामनोयोग, सत्य-मृषामनोयोग और असत्य-मृषामनोयोग । वचन-योग भी सत्यवचनयोग, मृषावचनयोग, सत्य-मृषावचनयोग और असत्य-मृषावचनयोगके भेदसे

चार प्रकारका हैं । काययोग औदारिक, औदारिकमिश्र, वैक्रियिक, वैक्रियिकमिश्र, आहारक, आहारकमिश्र, और कार्मण काययोगके भेदसे सात प्रकारका है । इनका सर्वयोग पन्द्रह (१५) होता है । सब प्रत्ययोंका योग सत्तावन (५७) हुआ । >

पडिबध्दपच्चया पंचवंचास होति (५५) । एदेहि पच्चएहि मिच्छाइट्ठी सुत्तुत्तसोलस-पयडीओ बंधदि । एत्थ पंचमिच्छत्तपच्चयेसु अवणिदेसु पंचासपच्चया होंति (५०) । एदेहि पच्चएहि सासणसम्माइट्ठी सुत्तुत्तसोलसपयडीओ बंधदि। पंचासपच्चएसु ओरालियमिस्स-वेउव्वियमिस्स-कम्मइय-अणंताणुबंधिचउक्केसु अवणिदेसु तेदालं पच्चया होंति (४३) । एदेदि पच्चएहि सम्मामिच्छाइट्ठी सोलसपयडीओ बंधदि । तेदालपच्चएसु ओरालियमिस्स-वेउव्वियमिस्स-कम्मइयपच्चएसु पक्खित्तेसु छादालं पच्चया (४६) । एदेहिं पच्चएहि असंजदसम्माइट्ठी अप्पिदसोलसपयडीओ बंधदि । एदेसु असंजदसम्माइट्ठिपच्चएसु अपच्चक्खाणचउक्क-ओरालियमिस्स-वेउव्विय-वेउ-व्वियमिस्स-कम्मइय-तसासंजमेसु अवणिदेसु सत्तत्तीसपच्चया होंति (३७) । एदेहि पच्चएहि (१ ब. प्रतौ पच्चएहि इति पाठः नास्ति ।) संजदासंजदो अप्पिदसोलसपयडीओ बंधदि । एदेसु संजदासंजदस्य सत्तत्ती-सपच्चएसु पच्चक्खाणचउक्क एक्कारस-असंजमपच्चएसु अवणिदेसु अवसेसा बावीस, तत्थ आहारदुगे पक्खित्ते चउवीस पच्चया होंति (२४) । एदेहि पच्चएहि पमत्त-संजदो अप्पिदसोलसपयडीओ बंधदि । एदेंसु चउवीसपच्चएसु आहारदुगमवणिदेवावीस पच्चया होंति (२२) । एदेहि पच्चएहि अप्पमत्तसंजदा (२ मु. प्रतौ अपमत्तसंजदा इति पाठः ।) अपुव्वकरणपइङ्

< इनमेंसे आहारक और आहारकमिश्रको अलग करदेनेपर मिथ्यादृष्टिसे सम्बन्ध रखने-वाले प्रत्यय पचवन (५५) होते हैं । इन प्रत्ययोंसे मिथ्यादृष्टि सूत्राक्त सोलह प्रकृतियोंको बांधता हैं । इनमेसे पांच मिथ्यात्वप्रत्यययोंको अलग करदेनेपर पचास (५०) प्रत्यय होते है । इन प्रत्ययोंसे सासादनसम्यग्दृष्टि सूत्रोक्त सोलह प्रकृतियोंको बांधता हैं । इन पचास प्रत्ययोंमेंसे औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र, कार्मण और चार अनन्तानुबन्धी प्रत्ययोंको अलग करदेनेपर तेतालीस प्रत्यय होते हैं (४३) । इन प्रत्ययोंसे सम्यग्मिथ्यादृष्टि सोलह प्रकृतियोंको बांधता है ।

तेतालीस प्रत्ययोंमें औदारिकमिश्र, वैक्रियिकमिश्र और कार्मण प्रत्ययोंको मिलादेनेपर छ्यालीस प्रत्यय होते है (४६) । इन प्रत्ययोंसे असंयतसम्यग्दृष्टि विवक्षित सोलह प्रकृतियोंको बांधता है । इन असंयतसम्यग्दृष्टिके प्रत्ययोंमेंसे चार अप्रत्याख्यानावरण, औदारिकमिश्र, वैक्रियिक, वैक्रियिकमिश्र, कार्मण और त्रयासंयम, इन नौ प्रत्ययोंको कम करदेनेपर सैंतीस प्रत्यय होते है (३७) । इन प्रत्ययोंसे संयतासंयत विवक्षित सोलह प्रकृतियोंको बांधता है । इन संयतासंयतके सैतीस प्रत्ययोंमेंसे चार प्रत्याख्यान और ग्यारह असंयम प्रत्ययोंको कम करदेनेंपर शेष बाईस प्रत्यय रहते हैं, उनमें आहारक और आहारकमिश्रको मिला देनेपर चौबीस प्रत्यय होते है (२४) । इन प्रत्ययोंसे प्रमत्तसंयत विवक्षित सोलह प्रकृतियोंको बांधता है । इन चौबीस प्रत्य-योंमेंसे आहारकद्विकको कम करदेनेपर बाईस प्रत्यय होते हैं (२२) । इन प्रत्ययोंसे अप्रमत्तसंयत >

ओघेण पंचणाणावरणीयादीणं पच्चयपरुवणा

'उवसमा खवा च अप्पिदसोलसपयडीओ बंधति । एदेसु चेव छण्णोकसाएसु अवणिदेसु सोलस होंति (१६) । एदेहि पच्चएहि पढमअणियट्टी सोलस पयडीओ बंधदि । एत्थ णवुंसयवेदे अवणिदे पण्णारस होंति (१५) । एदेहि पच्चएहि विदियअणियट्टी अप्पिद-पयडीओ बंधदि । एदेसु इत्थिवेदे अवणिदे चोद्दस होंति (१४) । एदेहि पच्चएहि तदिय-अणियट्टी अप्पिदपयडीओ बंधदि । एत्थ पुरिसवेदे अवणिदे तेरह होंति (१३) । एदेहि पच्चएहि चउत्थअणियट्टी अप्पिदपयडीओ बंधदि । पुणो एत्थ कोधसंजलणे अवणिदे बारस होंति (१२) । एदेहि बारसपच्चएहि पंचमअणियट्टी अप्पिदपयडीओ बंधदि । पुणो एत्थ माणसंजलणे अवणिदे एक्कारस होंति (११) । एदेहि पच्चएहि पच्चएहि छट्ठअणियट्टी अप्पिदपयडीओ बंधदि । एदेहिंतो मायासंजलणे अवणिदे दस होंति (१०) । एदेहि पच्चएहि सत्तमअणियट्टी अप्पिदपयडीओ बंधदि । एदेंहि चेव दसहि पच्चएहि सुहुमसांपराइयो वि अप्पिदसोलसपयडीओ बंधदि । दससु लोभसंजलणे अवणिदे णव होंति (९) । एदे उवसंतकसाय-खीणकसाएहि बज्झमाणपयडीणं पच्चया । एदेहिंतो मज्झिमदो-दोमणवचिजोगे अवणिय ओरालियमिस्सकम्मइयकायजोगेसु पक्खित्तेसु-

----

< और अपूर्वकरणप्रविष्ट उपशमक एवं क्षपक जीव विवक्षित सोलह प्रकृतियोंको बांधते हैं । इन्हीं प्रत्योयोमेंसे छह नोकषायोंको अलग करदेनेपर सोलह प्रत्यय होते हैं (१६) इन प्रत्ययोंसे

प्रथम अनिवृत्तिकरण सोलह प्रकृतियोंको बांधता है । इनमेंसे नपुंसकवेदको अलग करदेनेपर पन्द्रह होते हैं (१५) । इन प्रत्ययोंसे द्वितीय अनिवृत्तिकरण विवक्षित प्रकृतियोंको बांधता है । इनमेंसे स्त्रीवेदको कम करदेनेपर चौदह होते है (१४) । इन प्रत्ययोंसे तृतीय अनिवृत्तिकरण विवक्षित प्रकृतियोंको बांधता हैं । इनमेंसे पुरुषवेदको अलग करदेनेपनर तेरह होते है (१३) । इन प्रत्ययोंसे चतुर्थ अनिवृत्तिकरण विवक्षित प्रकृतियोंको बांधता है । पुन: इनमेंसे क्रोधसंज्व-लनको अलग करदेनेपर बारह होते है (१२) । इन बारह प्रत्ययोंसे पंचम अनिवृत्तिकरण विवक्षित प्रकृतियोंको बांधता हैं । पुन: इनमेंसे मानसंज्वलनको कम करदेनेपर ग्यारह होते है (११) । इन प्रत्ययोंसे छठा अनिवृत्तिकरण विवक्षित प्रकृतियोंको बांधता है । इनमेंसे माया-संज्वलनको अलग करदेनेपर दश होते है (१०) । इन प्रत्ययोंसे सप्तम अनिवृत्तिकरण विवक्षित प्रकृतियोंको बांधता हैं । इन्ही दश प्रत्ययोंसे सूक्ष्मसाम्परायिक भी विवक्षित सोलह प्रकृतियोंको बांधता है । इन दश प्रत्ययोंमेसे लोभसंज्वलनको अलग करदेनेपर नौ प्रत्यय होते है (९) । ये नौ उपशान्तकषाय और क्षीणकषाय जीवोंकेद्वारा बांधी जानेवाली सानावेदनीय प्रकृतिकेप्रत्यय है । इनमेंसे मध्यम दो दो अर्थात् मृषा और सत्यमुषा मन और वचन योगोंको अलग >